अध्याय

1

# नीतिशास्त्र का स्वरूप एवं क्षेत्र

नीतिशास्त्र, दर्शन शास्त्र की वह शाखा है, जिसके अन्तर्गत मनुष्य के व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन से सम्बंधित कुछ मूलभूत समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। सामान्यतः हम दूसरे मनुष्य (व्यक्ति) के चरित्र का, उसके द्वारा किये गए कर्मो का, विशेष परिस्थितियों ये उसके द्वारा क्या किया जाना चाहिये था सभी परिस्थियों में उसे कुछ कर्म अवश्य ही करने चाहिए आदि पर विचार करते है, तो उपरोक्त सभी विचार जीवन के नैतिक क्षेत्र से जुड़े होते है। हम जीवन में 'अच्छा–बुरा', 'शुभ–अशुभ' 'उचित', 'अनुचित' 'कर्त्तव्य' आदि शब्दों का प्रयोग भी नैतिक सन्दर्भ में ही करते है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि इन शब्दों के प्रयोग द्वारा हम क्या कहना चाहते हैं। जब हम व्यक्ति के किसी कर्म को उचित अथवा अनुचित ठहराते है तो क्या हमारे पास इस प्रकार के निर्णयो के लिये कुछ तर्कसंगत कारण है? हम अपने इन निर्णयों के पीछे जो भी कारण प्रस्तुत करें तो उन्हें तर्कसंगत क्यों माना जाये?एक सामाजिक प्राणी होने के रूप में जब व्यक्तिगत हित और सामाजिक हितों के बीच संघर्ष पैश हो जाय तो कौनसे उपायों द्वारा उनमें समन्वय स्थापित किया जा सकता है?क्या मनुष्य केवल अपने सुख को प्रमुखता प्रदान करें अथवा दुसरों के सुख अथवा हितों में संतुलन बनाए रखे। इस हेतु क्या उपाय है?

वास्तव में मानव जीवन अपने में एक मूल्य अथवा आदर्श समाहित किये रहता है। यही आदर्श हममें एक नैतिक दृष्टि, नैतिक विश्वास को जन्म देता है। नीतिशास्त्र, हमारे इसी नैतिक विश्वास को बौद्धिक आधार प्रदान करता है। इसीलिये नीतिशास्त्र नैतिकता की मीमांसा है। ऐसा कहा जा सकता है कि जब से मनुष्य ने दूसरों के साथ मिलकर समाज का निर्माण किया, इसी में रहकर अपनी समस्याओं, अपने सुखों एवं उद्देश्यों को, दूसरों की समस्याओं सुखों एवं उद्देश्यों के साथ संगति प्रदान करने हेतु कुछ नियमों की खोज करने लगा ताकि एक सामन्जस्य पूर्ण समाजिक जीवन व्यतीत किया जा सके।

समय के साथ धीरे–धीरे इन्हीं सामाजिक परम्पराओं, रूढियों अथवा रीतिरिवाजों से ही उस शास्त्र या विज्ञान का विकास हुआ, जिसे आज हम नीतिशास्त्र, अथवा 'नैतिक दर्शन' कहते है।

## नीतिशास्त्र का अर्थ एवं परिभाषाः

नीतिशास्त्र का समानार्थक शब्द अंग्रेजी में 'एथिक्स' (Ethic) है, जिसकी व्युत्पति यूनानी भाषा के शब्द 'एथिका (Ethic) से हुई है और इसका अर्थ है– रीति–रिवाज, प्रचलन, आदत। इसी प्रकार 'मोरल' शब्द की व्युत्पति 'मोरेस' (More) से हुई है, जिसका अर्थ भी रीति या आदत से होता है।

इस प्रकार शाब्दिक दृष्टि से नीतिशास्त्र मनुष्यों की आदतों अथवा रीति–रिवाजों का विज्ञान है, जो समाज द्वारा अनुमोदित भी होती है।

कुछ महान नीति शास्त्रियों ने नीति शास्त्र को अपने–अपने दृष्टिकोण से परिभाषित किया हैः–

(i) मैकेन्जी के अनुसार ''नीतिशास्त्र मनुष्यों की आदतों की पृष्ठभूमि में स्थित सिद्धान्तों का विवेचन और उनकी अच्छाई तथा बुराई के कारणों का विश्लेषण करता है।''

(ii) शुक्र नीति के अनुसार ''नीतिशास्त्र सभी शास्त्रों का उपजीव्य और लोक स्थिति का व्यवस्थापक है। इसलिए वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, इन चार पुरूषार्थो का प्रदाता है।''

(iii) यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने भी नीतिशास्त्र को न्याय का ही विवेचन माना था।

(iv) पाश्चात्य दार्शनिक काण्ट ने भी नीतिशास्त्र को कर्त्तव्य शास्त्र या धर्मशास्त्र माना है। उनके

मत में, मनुष्य मात्र में कर्त्तव्य और नैतिक नियम के एक से प्रत्यय है।

(v) मनु के अनुसार–'आचार परमो धर्मः' उनका कहना है कि राग–द्वेष से रहित सज्जन विद्वानों द्वारा जो व्यवहार किया जाता है और अपना दृश्य भी उचित समझता है, वही व्यवहार हमारा धर्म है।

(vi) अरस्तू के अनुसार ''नीतिशास्त्र मानव जीवन के चरम लक्ष्य का अन्वेषण है वस्तुतः अन्य सभी लक्ष्य उस चरम लक्ष्य के साधन है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर सार रूप में कहा जा सकता है कि नीतिशास्त्र वह आदर्शमूलक विज्ञान है जो सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सामान्य मनुष्यों के आचरण या ऐच्छिक (बिना बाध्यता के) कर्मो पर निष्पक्ष एवं व्यवस्थित रूप से विचार करके उनके सम्बंध में उचित, अनुचित अथवा शुभ, अशुभ का निर्णय देने के लिये मापदण्ड प्रस्तुत करता है और इस निर्णय के आधार के लिए कुछ मूल सिद्धान्तों अथवा मानकों या आदर्शो की स्थापना करता है।

**नीतिशास्त्र का स्वरूप–** नीतिशास्त्र की परिभाषाओं से प्रश्न उठता है कि इसका स्वरूप क्या है? इस विषय में दो विचार धाराऐं प्रचलित हैः–

1. नीतिशास्त्र एक विज्ञान है
2. नीतिशास्त्र एक आदर्श मूलक विज्ञान है।

**1. नीतिशास्त्र एक विज्ञान हैः–** प्रथम विचारधारा की मान्यता है कि नीतिशास्त्र में विज्ञान की मुख्य विशेषताऐं विद्यमान रहती है। किसी विषय या वस्तु अथवा घटना का यथा सम्भव क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित विवेचन और पूर्णतया निष्पक्ष होकर उससे सम्बंधित सत्य का अनुसंधान करना विज्ञान का प्रमुख उद्देश्य है। कुछ विद्वानों के मत में ये सभी विशेषताऐं नीतिशास्त्र में भी विद्यमान है। नीतिशास्त्र भी मानव जीवन से सम्बंधित समस्याओं पर निष्पक्ष एवं व्यवस्थित रूप से मानवीय स्वभाव एवं उनकी क्षमताओं के आधार पर स्पष्टीकरण एवं समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न करता है। नीतिशास्त्र के बिना पर्याप्त कारण, सुसंगत तर्क एवं निष्पक्ष परीक्षा के किसी भी मूलसिद्धान्त या आदर्शो की स्थापना नही करता। अतः नीति शास्त्र एक विज्ञान है।

**2.नीतिशास्त्र एक आदर्श मूलक विज्ञान हैः–** दूसरी ओर कुछ विद्वान नीतिशास्त्र को आदर्श मूलक विज्ञान के रूप में स्वीकार करते है। इनकी मान्यता है कि प्राकृतिक विज्ञान केवल तथ्यात्मक वर्णन करते है। जैसे वनस्पति विज्ञान पेड़, पौधो का उसी रूप में वर्णन करते है, जिस रूप में वे पाये जाते है। उसी प्रकार भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, मनोविज्ञान आदि केवल विवरणात्मक विज्ञान है। ये सभी विज्ञान बाध्य विषयों का वस्तुनिष्ठ (वस्तु जैसी है, उसी रूप में) वर्णन करता है न कि उनका मूल्यांकन (उचित–अनुचित का विचार)। नीतिशास्त्र को इस श्रेणी का विज्ञान नहीं कहा जा सकता। वास्तव में नीतिशास्त्र का उद्देश्य, किसी तथ्यात्मक विवरण को प्रस्तुत करना नही है, बल्कि विषयों या वस्तु का मूल्यांकन करना है। जैसे यदि हम किसी के कर्म को उचित कह रहे है तो इसका अभिप्राय यह है कि किसी नियम या आदर्श के मापदण्ड के आधार पर उसके कर्म को उचित सिद्ध किया जा रहा है। अतः नीतिशास्त्र का कार्य केवल उचित–अनुचित, शुभ–अशुभ का केवल वर्णन करना नही बल्कि मूल्यांकन करना है। जिन नियमों, सिद्धान्तों या आदर्शो के आधार पर हम आचरण को उचित–अनुचित, शुभ–अशुभ कहते है वे उस मूल्यांकन के मान्यता प्राप्त मापक है। इस प्रकार नीतिशास्त्र विवरणात्मक विज्ञान न होकर आदर्श मूलक विज्ञान है; जिसका उद्देश्य मनुष्य और उसके कर्मों का तथ्यात्मक वर्णन न होकर उनके मूल्यांकन के मापदण्डों की स्थापना करना ही है।

यहाँ यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि नीतिशास्त्र केवल समाज में रहने वाले मनुष्यों के ऐच्छिक कर्मो (जो उनके द्वारा बिना किसी दबाव के किये गये हो) का ही मूल्यांकन करता है, न कि विक्षिप्त (मानसिक रूप से असामान्य), बहुत छोटे बालकों तथा पशुओं के कर्मो का मूल्यांकन करता है।

3. **नैतिक प्रत्ययः–** ''नीतिशास्त्र व्यवहार की नैतिकता का विज्ञान है। यह कर्मो के उचित–अनुचित का, नैतिक शुभ–अशुभ का, अच्छे–बुरे कर्मो में प्रवृत्त नैतिक कर्त्ताओं की योग्यता–अयोग्यता का, समाज में रहने वाले व्यक्तियों के अधिकार, कर्त्तव्य और चारित्रिक गुणों का, उनकी स्वाधीनता और उत्तरदायित्व का विवेचन करता है। नैतिक चेतना में सन्निहित इन्ही आधारभूत प्रत्ययों का सम्यक् विवेचन इसका लक्ष्य है।''–जे.एन. सिन्हा

4. **(उचित– अनुचित) (Right, Wrong) –** जब कोई कर्म 'नियमानुसार' होता है, जो उसे 'सत्' कहा जाता है। असत् कर्म वे कर्म होते है जो 'आचार–विषयक–नियम (नैतिक – नियम)' से संगति नही रखते अर्थात नियम – विरूद्ध होता है। नैतिक नियमों का लक्ष्य सर्वोच्च शुभ की प्राप्ति होता है। सत् (उचित) कर्म नैतिक–नियमों की सिद्धि में सहायक है और इन नैतिक – नियमों द्वारा सर्वोच्च शुभ की प्राप्ति होती है।
इस प्रकार सत् कर्म (उचित) शुभ की प्राप्ति का एक साधन बन जाता है और असत् – कर्म (अनुचित) अशुभ की प्राप्ति का साधन बन जाता है। अतः शुभ साध्य है और सत् (उचित) साधन।

5. **उचित (Right) और शुभ (Good)–** शुभ पर ही उचित आघृत है। उचित या सत् का प्रयोग साधन के रूप में होता है, किन्तु शुभ का प्रयोग साधन और साध्य दोनों के लिए किया जाता है। जब शुभ किसी लक्ष्य की प्राप्ति का साधन होता है तो इस अर्थ में उसे सत् (उचित) कहा जाता है। अतः जो शुभ है वह सत् (उचित) है और जो उचित है उसे शुभ भी कहा जा सकता है। परन्तु सर्वोच्च शुभ के लिए उचित प्रत्यय का प्रयोग नही होता।

अशुभ–अशुभ वह है, जो लक्ष्य प्राप्ति में सहायक न होकर बाधक हो। शुभ को सामान्य–स्वीकृति प्राप्त होती है परन्तु अशुभ को सामान्यतः तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है। दया, क्षमा, प्रेम आदि शुभ माने जाते है क्योंकि इन्हें सामान्य समर्थन प्राप्त है और लोभ, मोह, घृणा आदि अशुभ माने जाते है, क्योंकि इन्हें सामान्यत तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है।

6. **सर्वोच्च शुभ (Highest good)–** जो किसी आवश्यकता या इच्छा की पूर्ति करे वह शुभ है। स्वास्थ्य, धन, ज्ञान आदि शुभ है। शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक बौद्धिक नैतिक और सौन्दर्य भोग से सम्बन्ध क्षेत्रों में शुभ के दर्शन किए जा सकते है। शुभ सापेक्ष या निरपेक्ष हो सकता है। सापेक्ष शुभ वह है, जो किसी अन्य शुभ की प्राप्ति कर सकते है। शुभ सापेक्ष या निरपेक्ष हो सकता है। सापेक्ष शुभ वह है, जो किसी अन्य शुभ की प्राप्ति का साधन है। जैसे परीक्षा में अच्छा स्थान प्राप्त करना सापेक्ष शुभ है, क्योंकि वह अच्छी नौकरी पाने का साधन है। शुभ वस्तुओं की एक श्रृंखला है, जिसके शिखर पर सर्वोच्च शुभ विराजमान है। सर्वोच्च शुभ स्वयं साध्य है और यह किसी अन्य आदर्श का साधक नही हो सकता।

सर्वोच्च शुभ के स्वरूप को लेकर विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान आंतरिक नियमों को, कुछ सुख को, कुछ पूर्णता प्राप्ति को सर्वोच्च–शुभ मानते है।

7. **अधिकार और कर्त्तव्य (Right and Duty)**– मनुष्य सामाजिक प्राणी है। सामाजिक या सामान्य–हित के लिए समाज अपने सदस्यों को कुछ नैतिक अधिकार प्रदान करता है। व्यक्ति इन अधिकारों का उपभोग करता है। जो दूसरों के अधिकारों का उल्लंघन करते हैं वे समाज द्वारा दण्डनीय हैं।

अधिकार–व्यक्तियों के सम्पूर्ण विकास के लिये अनिवार्य तथा समाज द्वारा प्रदत्त सुविधाओं को 'अधिकार' कहते हैं। ये अधिकार कानूनी एवं नैतिक दो प्रकार के होते हैं।

समाज ही अधिकार और कर्त्तव्यों की आधारशिला और व्यक्तियों को उन्हें मानने के लिए बाध्य करता है।

कर्त्तव्य मनुष्य के अर्न्तगत वासना और विवेक के मध्य होने वाले द्वन्द्व का सूचक है। विवेक व्यक्ति को उचित–अनुचित का अन्तर बताता है। कर्त्तव्य एक प्रकार का नैतिक ऋण है जिसे चुकाना प्रत्येक व्यक्ति का धर्म हो जाता है।

यदि हम अभ्यासपूर्वक सत् कर्त्तव्य करते है तो धर्मार्जन करते है और यदि असत् कर्म करते है तब हम अधर्म करते है। धर्म चरित्र की उत्कृष्टता है जबकि अधर्म चरित्र का दोष है। कर्त्तव्य बाह्य कर्म करते हैं तक हम अधर्म करते है।। धर्म अन्तर्निहित चरित्र की उत्कृष्टता है जबकि अधर्म चरित्र की ओर संकेत करता है। सद्गुण व्यक्ति के नैतिक विकास का प्रतीक होता है। इसमें तीन बाते आ जाती है–

(i) कर्तव्य ज्ञान
(ii) कर्तव्य का स्वेच्छा से पालन
(iii) सद्गुण का अर्जन।

## पुण्य और पाप (Merit and Demerit)

जब हमारा कर्म नैतिक मानण्ड का अनुसरण करता है तो उसमें पुण्य होता है जब कोइ कर्म उससे असंगत होता है तो उसमें पाप होता है। उचित कर्म (पुण्य) से चरित्र का नैतिक उत्थान होता है और अनुचित कर्म (पाप) से चरित्र का नैतिक–पतन होता है।

वासनाओं पर नियन्त्रण रखाना पुण्य है किन्तु वासनाओं पर पूर्ण विजय प्राप्त करना उससे भी बड़ा पुण्य है। हत्या करना पाप है, किन्तु उससे भी गंभीर पाप हत्यारे को हत्या के लिए उकसाना है।

कर्त्तव्य से नैतिक पूर्णता की प्राप्ति होती है और फलस्वरूप पुण्य मिलता है और कर्त्तव्य से नैतिक पूर्णता की विपरीत दिशा में प्रगति होती है और फलस्वरूप पाप मिलता है। इस प्रकार, पुण्य और पाप चरित्र के ही लक्षण कहे जाते है।

## पाप तथा भूल (Sin and Error)

पाप का अर्थ जानबूझकर कर्तव्य की लापरवाही दिखाना है। भूल का अर्थ अज्ञातवश कुछ ऐसा कार्य हो जाना जिससे स्वयं अथवा किसी अन्य व्यक्ति की हानि हो जाए।

भूल से किए गए कर्म में हानि पहुँचाने का अभिप्रायः इच्छा या उ्द्देश्य का अभाव रहता है। चूंकि यहाँ हानि भूल से हो जाती है इसलिए यह नैतिक निर्णय का विषय नहीं हो सकती क्योंकि केवल ऐच्छिक कर्म ही नैतिक–निर्णय का विषय हो सकता है।

जब हम किसी कार्य को अनुचित जानते हुए भी किसी व्यक्ति को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से करते है, तो पाप उत्पन्न होता है। पाप और भूल में मुख्य अन्तर यह है कि पाप जान–बूझकर किया जाता है किन्तु भूल अनजाने में हो जाती है। साथ ही, पाप में व्यक्ति की आंतरिक वृत्तियों तथा चरित्र पर विचार किया जाता है, लेकिन भूल अनजाने में हो जाती है। साथ ही, पाप में वयक्ति की आंतरिक वृत्तियों तथा चरित्र पर विचार किया जाता है, लेकिन भूल में क्रिया या परिणामों को बाहर से देखा जाता है।

## स्वतन्त्रता और उत्तरदायित्व (Freedom Will Responsibility)

**संकल्पः–** अपनी इच्छानुसार कर्म करने अथवा न करने की स्वतन्त्रता को ही 'संकल्प–स्वातन्त्र' कहते है। हमारे सभी कर्त्तव्य सम्बंन्धि निर्णयों का मूल आधार संकल्प की स्वतंत्रता है। यदि किसी मनुष्य ने किसी आन्तरिक या बाध्य दबाव में आकर कोई कर्म किया हो अथवा नही किया हो तो उस कर्म को उचित या अनुचित नही ठहराया जा सकता है। जैसे किसी डूबते हुए बालक को कोई व्यक्ति इसीलियें नही बचा पाया क्योंकि उसे तैरना ही नही आता तो उसके कर्म को अनुचित नही ठहराया जा सकता। उसी प्रकार यदि मृत्यु का भय दिखाकर कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति से चोरी करवाता है तो चोरी करने वाले व्यक्ति को अनैतिक मानकर दण्ड नही दिया जा सकता है।

जर्मन दार्शनिक काण्ट ने कहा है कि ''तुम्हे करना चाहिये, अतः तुम कर सकते हो।'' यहाँ ''चाहिये'' के अन्तर्गत स्वतंत्रता छुपी हुई है। जैसे तुम्हे सत्य बोलना चाहिये, दूसरों को धोखा नही देना चाहिये, तो सत्य बोल सकते है, दूसरो को धोखा देने अथवा चोरी करने से अपने आप को रोक सकते है।

मनुष्य अपने एच्छिक कर्मो और आदतो के लिये उत्तरदायी है। उसका अच्छा या बुरा चारित्र उसके द्वारा बार–बार किए एच्छिक कर्मो का परिणाम है और उसके लिये वह उत्तरदायी है।

कर्म के चुनाव के समय यद्यपि मनुष्य पर आंशिक रूप से वंश–परम्परा और परिस्थितियों का भी प्रभाव पड़ता है तथापि वे अपने ऐच्छिक कर्मो के लिये उत्तरदायी है। स्वतंत्रता का अर्थ पूर्ण अनियंत्रण नही वरन आत्म नियंत्रण है।

**अरबन के अनुसार –** ''मूल्य वह है जो मानवीय इच्छा की तृप्ति करें। मानवीय इच्छा की तृप्तिकारक सभी वस्तुएँ मूल्यवान है, अर्थात शुभ है''।

*'मूल्य' शब्द किसी भौतिक – वस्तु अथवा मानसिक अवस्था के उस गुण का बोध कराता है जिसके द्वारा मनुष्य की किसी आवश्यकता या इच्छा की तृप्ति होती है।

## दर्शनशास्त्र

मूल्यों का विभाजन – मनुष्य की मूल प्रवृत्तियॉ या भावनाऍ है जो उनको अपनी सन्तुष्टि के लिये प्रेरित करती है।

**अरबन ने मूल्यों को दो प्रकारों में विभाजित किया है–**

**मूल्य**

- **साधन मूल्य**
  - शारीरिक (क्षुधा, काम प्रवृत्ति)
  - आर्थिक (संग्रह प्रवृत्ति, शारीरिकम)
  - मनोरंजन (खेल)
- **साध्य मूल्य**
  - सामाजिक मूल्य
    - साहचर्य (समूह में रहने की प्रवृत्ति)
    - चरित्र (सहानुभूति, आत्मप्रकाश, आत्मधिकार)
  - आध्यात्मिक मूल्य
    - बौद्धिक
    - धार्मिक (श्रद्धा) सौन्दर्य
    - (रचना अनुकरण खेल)

सामाजिक मूल्य जैविक मूल्यों से उच्च कोटि के है और आध्यात्मिक–मूल्य सामाजिक मूल्यों से उच्च कोटि के है।

**साधन–मूल्य –** साधन मूल्य और मनुष्य के लिए सभी वस्तुएँ समान रूप से मूल्यावान नही होती। कुछ केवल साधन के रूप में मूल्यवान होती है और कुछ स्वतः साध्य होने के कारण। अतः समस्त मूल्यों को दो मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया है – साधन–मूल्य और साध्य–मूल्य।

**राइट के अनुसार –** ''साध्य मूल्य अपने ही कारण मूल्यवान होते है, साधन मूल्य अपने परिणामों के कारण मूल्यवान होते है।'' उदाहरण के लिए भोजन, वस्त्र, मकान, धन, सम्पत्ति तथा अन्याय भौतिक वस्तुऐं अपने आप में शुभ नही है, स्वास्थ्य जीवन – रक्षा तथा सुख के साधन होने के कारण उनकी कामना की जाती है। इसी कारण इन वस्तुओं से सम्बन्धित मूल्यों को 'साधन–मूल्य' की संज्ञा दी गयी है।

किन्तु कुछ मानसिक–अवस्थाऐं जिनकी स्वतः कामना की जाती है, यथा–सत्य, सौन्दर्य, संस्कृति और शील ये अपने परिणामों के कारण शुभ नही मानी जाती अपितु ये स्वतः साध्य और अपने आप में वांछनीय है। इनसे सम्बन्धित मूल्यों को ही 'साध्य–मूल्य' कहा जाता है।

साधन मूल्य – मनुष्य के लिए साधन–मूल्यों का विशेष महत्व है, क्योंकि ये उसके सुख, स्वास्थय, और जीवन रक्षा के अनिवार्य मूल आधार है। साध्य–मूल्य ही नही अपितु मनुष्य का संपूर्ण अस्तित्व भी अंततः इन्ही साधन–मूल्यों पर निर्भर होता है।

शारीरिक मूल्य वैयक्तिक मूल्यों के साधक है। स्वास्थ्य और शक्ति से युक्त शरीर द्वारा व्यक्ति श्रेष्ठ जीवन के अनुसरण में प्रयोग कर सकता है। खेल (मनोरंजन) भी मुख्य रूप से साधन मूल्य है, यह शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों क्षेत्रों में मनोरंजन का साधन है। आर्थिक–मूल्य भी स्वतः मूल्यवान नही है, उसका मूल्य अन्य मूल्यों (यथा शारीरिक, सामाजिक और आध्यात्मिक) को अर्जित करने के साधन रूप में है। सम्पत्ति स्वतः वांछनीय नही है, बल्कि अन्य शुभों का साधन होने के कारण वांछनीय है।

इस प्रकार शारीरिक – आर्थिक और मनोरंजन के मूल्य मूलतः साधन मूल्य है, साध्य मूल्य नही। साहचर्य के मूल्य जैसे सहकारिता, मैत्री, प्रेम आदि आत्म–विकास के साधन और साध्य दोनों है। इसी प्रकार चारित्रिक गुण यथा साहस, संयम, न्याय, प्रेम, ज्ञान आदि अपने आपमें शुभ है और आत्म लाभ या आत्म–उपलब्धि के साधन भी है।

इस प्रकार साहचर्य और चरित्र के मूल्य साधन–मूल्य और साध्य – मूल्य दोनों है।

**साध्य–मूल्य :–** ये मूल्य पूर्णतः परिणाम निरपेक्ष होते है। अर्थात इन मूल्यों का महत्व इनकी उत्कृष्टता के कारण होता है, परिणामों के कारण नही। इसी कारण ये सच्चतम मूल्य कहलाते है। साध्य–मूल्य मनुष्य की जिन मानसिक अवस्थाओं से सम्बन्धित होते है उनका शुभ होना किसी देश काल परिस्थितियों पर निर्भर नही होता अपने वे सदैव और सर्वत्र शुभ होती है। सौन्दर्य मुल्य, बौद्धिक मूल्य और धार्मिक मूल्य प्रायः साध्य मूल्य माने जाते है।

सौन्दर्य के मूल्य पूर्णतया निरपेक्ष होते है और अपने लिए उनका मूल्य होता है। बौद्धिक मूल्य (ज्ञान–संस्कृति) भी साध्य मूल्य है क्योंकि विद्वता स्वतः महत्वपूर्ण है। धार्मिक मूल्य (प्रार्थना – ईश्वर चिंतान) साध्य मूल्य है। अच्छे जीवन में उनका सर्वोच्च महत्व है, वे भक्ति और पवित्रता के सर्वोत्कृष्ट रूप है।

इस प्रकार सौन्दर्य, धार्मिक और बौद्धिक अति जैविक (आध्यात्मिक / साध्य) मूल्य हैं। सामान्यतः सत्य, सौन्दर्य, शुभ अथवा सदाचार को साध्य मूल्य कहा जाता है। वे स्वयं शुभ है। ये तीन आदर्श आत्मा की तीन आध्यात्मिक प्रक्रियाओं को तृप्त करते है। सत्य आत्मा के बौद्धि स्वभाव की सौन्दर्य उसके भावात्मक स्वभाव की ओर शुभ सदाचार अथवा नैतिक – उत्कृष्टता उसके संकल्पनात्मक स्वभाव की तृप्ति करते है।

मूल्य के दृष्टिकोण से उच्चतम शुभ एक दूसरे से उचित सम्बन्ध में अवस्थित सत्य सौन्दर्य और सच्चरित्रता आदि आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति में सन्निहित है। आत्मलाभ विविध मूल्यों के विचारपूर्वक व्यवस्थित करने से होता है।

## नीतिशास्त्र का क्षेत्र

नीतिशास्त्र का क्षेत्र उसके विषयों के विस्तार से निर्धारित होता है। आदर्श मूलक विज्ञान होने के कारण वह नैतिक आदर्श की परिभाषा देने का प्रयास करता है। यद्यपि उसका सीधा सम्पर्क मानव

व्यवहार की प्रकृति या विकास से नही होता तथापि मानव व्यवहार के उपयुक्त आदर्श की स्थापना हेतु उसे मानवीय स्वभाव से परिचित होना आवश्यक है। व्यवहार से चरित्र प्रगर होता है और चरित्र संकल्पो के अभ्यास का परिणाम है। संकल्प का सम्बंध हमारे मन की आन्तरिक वृत्ति से उत्पन्न स्थाई प्रवृत्ति है। अतः किसी के चरित्र को जानने के लिये नीतिशास्त्र को मनुष्य के कर्मों के स्त्रोत, प्रेरणा, अभिप्राय, ऐच्छिक और अनैच्छिक किया आदि अन्य पहलुओं को जान लेना चाहिये। अतः कहा जा सकता है कि नीतिशास्त्र का स्थापना मनोवैज्ञानिक आधार पर होनी चाहिये।

किन्तु नीतिशास्त्र की मौलिक समस्या तो नैतिक आदर्श का स्वरूप है, जिसके आधार पर नैतिक निर्णय दिये जा सके। नीतिशास्त्र बताता है कि नैतिक आदर्श क्या है, पर शुभ क्या है?सब कर्मों मे किसे उचित कहा जाय?नीतिशास्त्र ऐसे आदर्शो की विवेचना करता है जिसके द्वारा आदते और बुरे चरित्र का निर्णय ले सके और यह भी बता सके कौनसे कर्म करने योग्य है और कौनसे नही;

नैतिक आदर्शों के समर्थन में पर्याप्त कारण और उनके पक्ष में तर्क प्रस्तुत करना भी नीतिशास्त्र का प्रमुख कार्य है।

मनुष्य का परमहित क्या है, उसका स्वरूप क्या है? इसके अन्तर्गत नीतिशास्त्र शुभ,सत,कर्त्तव्य आदि के स्वभाव की खोज करता है।

नीतिशास्त्र का सम्बंध नैतिक निर्णयों के स्वभाव विषय तथा मानदण्डो से है। नैतिक निर्णयों के साथ समाज की स्वीकृति और अस्वीकृति की भावना जुडी होती है। नीतिशास्त्र इनकी भी विवेचना करता है, यही नही नीतिशास्त्र को उस कर्त्तव्य बुद्धि की भी व्याख्या करनी पड़ती है जो हममें उचित कर्म के प्रति प्रेरित और अनुचित कर्म के प्रति अरूचि उत्पन्न करती है।

नीतिशास्त्र पुण्य—पाप, धर्माधर्म के लक्षणों का विवेचन करता है। यह, यह जानने का प्रयास भी करता है कि कोई कर्म पुण्य कर्म क्यों होता है,

नीतिशास्त्र इच्छा स्वातंत्र की प्रकृति पर अध्ययन करता है। अपने ऐच्छिक कर्मो के लिये मनुष्य उत्तरदायी है। दण्ड के स्वरूप और प्रकारों के साथ दण्ड के समर्थन में तर्को की स्थापना भी नीतिशास्त्र करता है।

नीतिशास्त्र का कार्य मनोविज्ञान, दार्शनिक, राजनैतिक, में उत्पन्न समस्याओं का अध्ययन करनो भी है। जैसे मनोवैज्ञानिक समस्याऐं ऐच्छिक कर्म, कर्मो की प्रेरणा, इच्छा, सुख आदि की व्याख्या, मानव का तात्विक (वास्तविक) स्वरूप, ईश्वर, आत्मा की अमरता, श्रगत की नैतिक व्यवस्था जैसी दार्शनिक समस्याओं, व्यक्ति और समाज के सम्बंधी समाज शास्त्रीय समस्याओं और व्यक्ति राज्य का सम्बंध राज्य का नैतिक आधार और उनके नैतिक कर्त्तव्यों से सम्बंधित राजनैतिक समस्याओं की विवेचना करना भी नीतिशास्त्र का कार्य है।

## बहुविकल्पी प्रश्न

(1) नीतिशास्त्र का शाब्दिक अर्थ है—

(अ) नियम (ब) चरित्र (स) रीति (द) सिद्धान्त

(2) नीतिशास्त्र है—

(अ) सैद्धान्तिक विज्ञान (ब) प्रायोगिक विज्ञान (स) आदर्शमूलक विज्ञान (द) प्राणि विज्ञान

(3) नीतिशास्त्र न्याय का विवेचन करता है, ऐसा मानना है—

(अ) काण्ट (ब) अरबन (स) प्लेटो (द) चाणक्य

(4) नीतिशास्त्र मानव जीवन के चरम लक्ष्य का अन्वेषण है— कहना है—

(अ) चाणैय (ब) शुक्रनीति (स) अरस्तू (द) सुकरात

(5) नियमानुसार कर्म कहलाता है—

(अ) सत् (ब) शुक्रनीति (स) कर्तव्य (द) आदत

(6) सत् का समानार्थ है–

(अ) पुण्य (ब) शुभ (स) उचित (द) कर्तव्य

(7) नीतिशास्त्र मूल्यांकन करता है–

(अ) मनुष्यों का (ब) विक्षिप्तो का (स) बालको का (द) पशुओं का

(8) ''नीतिशास्त्र मानव जीवन में सन्निहित आदर्श का विज्ञान है।'' नीतिशास्त्र की यह परिभाषा दी–

(अ) राइट (ब) काण्ट (स) अरस्तू (द) मैकेन्जी

(9) साधन मूल्य नही है–

(अ) चरित्र (ब) शारीरिक (स) आर्थिक (द) मनोरंजन

(10) साध्य मूल्य नही है–

(अ) बौद्धिक (ब) साहचर्य (स) मनोरंजन (द) सौन्दर्य

(11) अति–जैविक मूल्य है–

(अ) आर्थिक (ब) मनोरंजन (स) धार्मिक (द) शारीरिक

(12) जिन मूल्यों का शुभत्व देश काल परिस्थिति पर निर्भर नही होता, वे कहलाते है–

(अ) साधन मूल्य (ब) अनुचित मूल्य (स) उचित मूल्य (द) साध्य मूल्य

## अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

(1) नीतिशास्त्र का शाब्दिक अर्थ क्या है?
(2) नीतिशास्त्र किस का मूल्यांकन करता है?
(3) नीतिशास्त्र कैसा विज्ञान है?
(4) कठोपनिषद् के अनुसार धीर मनुष्य किसका वरण करते है?
(5) प्लेटो ने नीतिशास्त्र को किसका विवेचन माना?
(6) मनु ने परम धर्म किसे माना है?
(7) अरबन ने मूल्यों को कितने भागों में बांटा है?
(8) साधन मूल्य कौन – कौनसे है?
(9) सामाजिक मूल्य कौनसे है?
(10) आध्यात्मिक मूल्य कौन–कौन से है?
(11) नियम विरूद्ध कर्म को क्या कहते है?
(12) शुभ की प्राप्ति का साधन क्या है?
(13) स्वयं साध्य शुभ कौनसा है?
(14) नैतिक मानदण्ड का उल्लघंन करने वाला कर्म क्या कहलाता है?
(15) अज्ञातवश किया गया खराब, कर्म, जिससे अन्य व्यक्ति की हानि हो जाए, कहलाता है?
(16) ''चाहिए'' का अर्थ क्या है ?

## लघूत्तरात्मक प्रश्न

(1) कर्तव्य के रूप में नीतिशास्त्र को परिभाषित कीजिये?
(2) नीतिशास्त्र आदर्शमूलक विज्ञान है, कैसे?
(3) चाणक्य ने नीतिशास्त्र को स्पष्ट कीजिये?
(4) शाब्दिक दृष्टि से नीतिशास्त्र को स्पष्ट कीजियें?
(5) शुक्रनीति के अनुसार नीतिशास्त्र को परिभाषित कीजिये?
(6) मूल्य क्या है?
(7) साधन मूल्य क्या है?
(8) साध्य मूल्य क्या है?
(9) जैविक मूल्यों को स्पष्ट करो?
(10) अति जैविक मूल्यों को परिभाषित कीजिये ?

(11) सत् क्या है?
(12) सर्वोच्च शुभ क्या है?
(13) धर्म कया है?
(14) कर्तव्य को समझाइयें?
(15) भूल तथा पाप में अन्तर बताइयें?
(16) उत्तरदायित्व के प्रत्यय को समझाइये?

### निबन्धात्मक प्रश्न

(1) नीतिशास्त्र का शाब्दिक अर्थ बताइये?विभिन्न विद्वानों ने नीतिशास्त्र को किस प्रकार परिभाषित किया है?
(2) नीतिशास्त्र क्या है?कोई चार नैतिक प्रत्ययों की विस्तार से व्याख्या कीजिये।
(अ) सत्–असत् (ब) सत्–शुभ (स) सर्वोच्च शुभ (द) पुण्य–पाप
(स) अधिकार – कर्तव्य (र) स्वतन्त्रता – उत्तरदायित्व
(3) मूल्य क्या है?अरबन द्वारा दिए गए मूल्यों के वर्गीकरण की सविस्तार विवेचना कीजिये।
(4) राइट द्वारा दी गई मूल्यों की परिभाषा और उनके वर्गीकरण की सविस्तार विवेचना कीजिये।